महिमामयी प्राचीन उज्जयिनी

शम्भु दयाल गुरु

सारांश :- **यह प्राचीन नगर, जिसे सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रचलित नाम उज्जयिनी से भी जाना जाता है, अपने अंतस में हजारों वर्षों की सभ्यता के अनगिनत अवशेष समाहित किये हुए है। प्रमुख धार्मिक नगर के रूप में इसकी प्रतिष्ठा सर्वविदित है। यहाँ के महाकुंभ का अपना महत्व है। पाँचवी शताब्दी ईसा पूर्व से परमार काल यानी कि चौदहवीं सदी की शुरुआत तक उज्जैन महापंथों और व्यापारिक मार्गों का केन्द्र बिन्दु था। पूर्व से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण तक जाने वाले महापंथ उज्जैन से होकर ही निकलते थे। प्रस्तुत लेख में इस प्राचीन नगर के इतिहास, समृद्धि और विरासत का विवेचन किया गया है।**

महत्वपूर्ण शब्द :- **नागवंश, शुंगवंश, क्षत्रप, महापंथ, पुरातात्विक अवशेष**

प्रस्तावना

उज्जैन की धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, प्रागैतिहासिक और ऐतिहासिक महिमा अपरम्पार है। इसका सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रचलित, सर्वमान्य नाम उज्जयिनी है। विभिन्न अवधियों में इसे अलग-अलग नामों से जाना गया है। उज्जयिनी का अर्थ होता है 'विजय प्राप्त करने वाला'। स्कंद पुराण के अवन्त्यखण्ड के अनुसार- अवन्ति के अधिष्ठाता देवता, महादेव ने त्रिपुरी के दानव, त्रिपुर पर विजय प्राप्त की थी। इस विजय के उपलक्ष्य में अवन्तिवासियों ने अपने प्रतिष्ठित नगर का नाम उज्जयिनी रख लिया था।[1]

स्कंदपुराण से ही हमें ज्ञात होता है कि इस महानगर के छः विभिन्न कल्पों में, छः विभिन्न नाम थे। पहले कल्प में इसका नाम स्वर्णश्रृंग था, दूसरे में कुशस्थली, तीसरे में अवन्तिका, चौथे में अमरावती, पाँचवे में चूड़ामणि तथा छठे कल्प में यह पद्मावति के नाम से विख्यात था।[2] इस विस्तृत तथा अत्यंत समृद्ध नगर को महाकवि कालिदास ने 'विशाला' कहा है।[3] सोमदेव से भी उज्जैन नगर के तीन नाम ज्ञात होते हैं- पद्मावति, भोगवती तथा हिरण्यवती। विभिन्न भाषाओं के स्रोतों में संस्कृत में ही उज्जयिनी के अलग-अलग हिज्जे मिलते हैं। पाली ग्रंथों में इसे 'उज्जेंनी'[5], प्राकृत में 'उजेनी'[6] और क्लासिकल लेखकों ने इसे 'ओजेन'[7] लिखा है।

उज्जैन उन चार महातीर्थों में है, जहाँ देव-दानव संघर्ष में अमृत की बूंदें झलकी थीं। अन्य तीन हैं प्रयाग, हरिद्वार और नासिक। इसलिए बारह वर्ष के अन्तराल से उज्जैन में महाकुंभ आयोजित होता है। इस बार भी नगर में सिंहस्थ महाकुंभ आयोजित है। एक माह तक, देश के कोने-कोने से तथा विदेशों से भी करोड़ों श्रद्धालु पवित्र शिप्रा में डुबकी लगाने और भगवान महाकाल के दर्शन के लिए एक माह तक आते रहेंगे।

प्राग इतिहास व आद्य इतिहास

कायथा- भगवान महाकाल की यह महानगरी उज्जैन, अपने अंतस में ईसा से दो हजार वर्ष पूर्व की सभ्यता के अनगिनत अवशेष समाहित किये हुए है। उज्जैन- मक्सी मार्ग पर उज्जैन से 25 कि.मी. दूर स्थित कायथा में, जो कि छोटी काली सिन्ध नदी के तट पर स्थित है, व्यापक उत्खनन किया गया था। प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता विष्णु श्रीधर वाकणकर विक्रम वि.वि. उज्जैन की ओर से इस उत्तरदायित्व को सम्हाल रहे थे। उत्खनन में एक नयी सभ्यता का उद्घाटन हुआ। ऐसी सभ्यता जिसकी खोज तब तक नहीं हुई थी। कायथा ने न केवल मालवा क्षेत्र की प्रारंभिक सभ्यता से हमें अवगत कराया, वरन् अन्य क्षेत्रीय सभ्यताओं से उसके सम्बन्ध उजागर कर दिये।

□ **पूर्व निदेशक, मध्यप्रदेश जिला गजेटियर्स तथा मध्यप्रदेश राजकीय अभिलेखागार**

कायथा में प्राप्त पुरातात्विक अवशेषों से स्पष्टतः दो सांस्कृतिक धरातलों का पता चला है। ये संस्कृतियाँ निश्चय ही मालवा की ताम्राश्म सभ्यता के पहले की हैं। प्राप्त अवशेषों की कार्बन डेटिंग पद्धति से कायथा की सभ्यता 2015 ई. पूर्व की सिद्ध हुई है। यह वही समय था, जब हड़प्पा सभ्यता का ह्रास प्रारंभ हो गया था और हड़प्पा की जन-जातियाँ पश्चिमी क्षेत्रों से पूर्वी तथा दक्षिणी क्षेत्रों की ओर पलायन कर रही थीं।[8]

कायथा में मृदभाण्ड, औजार, सिक्के, सीलें, मूर्तियाँ, गुरिये, पेन्डेंट, हड्डी से निर्मित सामग्री तथा सोने, चांदी, कांसे, लोहे आदि धातुओं से बनीं वस्तुएं मिलीं हैं। इससे ज्ञात होता है कि कायथा धातु उद्योग का मालवा में प्रारंभिक केन्द्र था। पश्चिम निमाड़ जिले में नवदा टोली तथा महाराष्ट्र में ताम्राश्म काल की सारी तिथियाँ कायथा के बाद की हैं। इस प्रकार कायथा ऐसी संस्कृति का केन्द्र बिन्दु प्रतीत होता है जो पश्चिमी भारत में प्राप्त हड़प्पाई अवशेषों के मध्य-तल की संस्कृति की समकालीन थी।[9]

दंगवाड़ा- उज्जैन से 32 कि.मी. दूर दंगवाड़ा में सन 1979 में हुए उत्खनन में 2000 ईसा पूर्व से परमार-कालीन सभ्यता के प्रमाण प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुए हैं। उत्खनन का स्थान चम्बल नदी के तट पर, दंगवाड़ा ग्राम से कोई दो कि.मी. की दूरी पर है। एक टीले की खुदाई में ताम्राश्म काल के अवशेष बड़ी संख्या में मिले हैं। इनमें मालवा ताम्राश्म के मृदभाण्ड, जिनमें कटोरे, कप-तश्तरियां शामिल हैं, प्राप्त हुए हैं। ये पात्र, चित्रित, भूरे, लाल-काले रंग के हैं। उन पर ज्यामितीय या जानवरों के चित्र अधिकांशतः पाये गये हैं। इनके सिवाय, पकी मिट्टी के सांड़, हिरण, सांभर, बैल, नीलगाय आदि जानवरों के अस्थि-पंजर और साथ ही चावल, गेंहू, जौ, मूँग, ज्वार, उड़द आदि के जले हुए दाने मिले हैं। इन अवशेषों को 1800 से 1300 ईसा पूर्व का माना गया है।[10] उत्खनन में पकी मिट्टी का, तांबे की कुल्हाड़ी बनाने का सांचा प्राप्त हुआ है। यह निश्चय ही दुर्लभ और बेजोड़ खोज है क्योंकि भारतवर्ष में कहीं भी वह उपलब्ध नहीं हुआ है।[11]

उज्जैन- उज्जैन के गढ़-कालिका क्षेत्र में हुए उत्खनन से ज्ञात होता है कि इस प्राचीन नगर की बसाहट संभवतः सातवीं सदी ईसा पूर्व में प्रारंभ हुई होगी।[12] वहाँ से काले और लाल मृद भाण्ड तथा लोहे, पत्थर व ईंटों से बने निर्माण मिले हैं। यहाँ जो अवशेष प्राप्त हुए हैं उससे प्रतीत होता है कि यही स्थान प्राचीन उज्जयिनी था। विभिन्न संस्कृतियों के क्रमशः प्रमाण से स्पष्ट है कि 7वीं सदी ईसा पूर्व से 14वीं सदी तक लोग यहाँ निवासरत थे। उस समय उज्जयिनी भारतवर्ष के विशाल और प्रसिद्ध नगरों में से एक था।[13]

उत्खनन में प्राचीन उज्जैनी चारों ओर से विशाल दीवारों से सुरक्षित की गयी थी। यही नहीं, नगर के दोनों ओर पानी से भरी, गहरी खाइयां थीं, जबकि दो ओर से क्षिप्रा नदी सुरक्षा प्रदान करती थी। बाहरी दीवारें 62 मीटर चौड़ी तथा 13 मीटर ऊँची थीं।

इतिहास- यह सर्वमान्य है कि 7वीं सदी में उज्जयिनी क्षेत्र अवन्ति राज्य का न केवल हिस्सा था, वरन उज्जयिनी ही उस शक्तिशाली राज्य की राजधानी थी। मत्स्य पुराण के अनुसार अवन्ति नाम शासक कुल के राजकुमार 'अवन्ति' के नाम पर पड़ा। राजकुमार अवन्ति हैहय वंश के शासक कीर्तवीरार्जुन का पुत्र था।[14] मार्कण्डेय और लिंग पुराण भी इस तथ्य का समर्थन करते हैं।[15] और पीछे लौटें तो अवन्ति के दो शक्तिशाली राजाओं विन्द और अनुविन्द का महाभारत के युद्ध में कौरवों की ओर से भीषण युद्ध करने का उल्लेख मिलता है। महाभारत में उन्हें महारथी कहा गया है। भीष्म पितामह ने विन्द और अनुविन्द के युद्ध-कौशल की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। भीष्म पितामह के नेतृत्व में उन्होंने दुर्धष संघर्ष किया। अंततः दोनों वीर योद्धा अर्जुन तथा भीम से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए।[16]

उल्लेखनीय है कि इसी पवित्र नगरी, उज्जयिनी में भगवान श्रीकृष्ण और उनके बड़े भाई बलराम ने सान्दीपनि ऋषि के आश्रम में रहकर शिक्षा ग्रहण की थी। कृष्ण ने यहाँ हैहय राजकुमारी मित्रवृन्दा से विवाह किया था। वह विन्द और अनुविन्द की बहिन थीं।[17]

चण्ड प्रद्योत- अवन्ति के प्रतापी शासक, चण्ड प्रद्योत महासेन

से मालवा का इतिहास-काल प्रारंभ हो जाता है। प्रद्योत, भगवान बुद्ध का समकालीन था। कहा जाता है कि बुद्ध तथा प्रद्योत की जन्मतिथि एक ही थी और यह भी संयोग है कि जिस दिन बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ, चण्ड उसी दिन अवन्ति का शासक बना। प्रद्योत के समय अवन्ति अपनी कीर्ति और उन्नति के शिखर पर पहुँची। अवन्ति के सिवाय तीन और शक्तिशाली राज्य विद्यमान थे। मगध, कोशल तथा वत्स राज्य। इनमें स्वाभाविक ही संप्रभुता के लिए कड़ी स्पर्धा थी। मगध के अजातशत्रु ने चण्ड के भय से अपनी राजधानी और राजगृह की कड़ी सुरक्षा की थी।[18]

अवन्ति तथा पड़ोसी राज्य वत्स में कड़ी स्पर्द्धा थी। चण्ड ने वत्स के राजा उदयन को हाथी के शिकार के बहाने बुलाकर बन्दी बना लिया। परन्तु उदयन चतुर था। वह चण्ड की बेटी वासवदत्ता को ही भगाकर ले गया और उसे अपनी पटरानी बनाया।[19] प्रद्योत वंश के पाँच राजाओं ने अवन्ति पर कुल 138 वर्ष शासन किया।[20]

शिशुनाग- पुराणों के अनुसार मगध के राजा शिशुनाग ने अवन्ति पर विजय प्राप्त कर प्रद्योत वंश का अन्त कर दिया और उसे मगध राज्य में शामिल कर लिया। इस प्रकार पहली बार अवन्ति राज्य की स्वतंत्रता का अंत हो गया।[21] और अवन्ति इसके बाद शिशुनागों, नंदों[22] तथा मोर्यों (जो सब मगध के शासक रहे) के विशाल राज्यों का अंग बना रहा।[22]

मौर्य- चन्द्रगुप्त मौर्य (324 ई.पू.) को भारतवर्ष के पहले ऐतिहासिक सम्राट का श्रेय प्राप्त है। देश को विदेशी यूनानी शासन की अधीनता से मुक्त करने का सेहरा भी उन्हीं के सिर पर बँधता है। चंद्रगुप्त क्योंकि कर्नाटक तक संपूर्ण क्षेत्र के शासक माने जाते हैं अतः अवन्ति क्षेत्र भी विशाल मौर्य साम्राज्य का हिस्सा था। 299 ई.पू. में चंद्रगुप्त का पुत्र बिन्दुसार गद्दी पर बैठा। उन्होंने 18 वर्षीय अपने पुत्र अशोक को अवन्ति का राज्यपाल नियुक्त कर उज्जयिनी भेजा था। दीपवंश के अनुसार अशोक 11 वर्ष तक अवन्ति के राज्यपाल का दायित्व निभाते हुए उज्जयिनी में निवासरत रहे।[23] पाटलिपुत्र से उज्जयिनी जाते हुए अशोक ने विदिशा में विश्राम किया था। वहाँ नगरसेठ की पुत्री देवी से अशोक का विवाह हुआ। उज्जयिनी में ही देवी ने अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्रा को जन्म दिया। किन्तु जब अशोक शासन की बागडोर संहालने पाटलिपुत्र गये, तो देवी विदिशा में ही निवास करती रहीं। परन्तु अशोक पुत्र-पुत्री को साथ ले गये। संभवतः देवी के कारण ही सांची में स्तूप का निर्माण कराया। अशोक के शासन काल में भी उज्जयिनी राज्यपाल का मुख्यालय बना रहा।[24]

जैन परम्पराओं के अनुसार उज्जयिनी मौर्यों के मगध साम्राज्य की द्वितीय राजधानी होने का गौरव प्राप्त करती रही। यह अशोक के उत्तराधिकारी 'सम्प्रति' तक तो निश्चय ही स्थिति थी।

शुंग- अंतिम मौर्य सम्राट की हत्याकर सेनापति पुष्यमित्र शुंग ने शुंग राजवंश की 185 ई.पू. में नींव रखी। वह मगध साम्राज्य का अधिपति बन गया। पुराण शुंग वंश का शासन काल 112 वर्ष का मानते हैं। विदिशा तो निश्चित रूप से शुंग राज्य का हिस्सा था। अवन्ति उनके राज्य में शामिल था या नहीं यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में लिखा है कि युवराज अग्निमित्र विदिशा का राज्यपाल था।[25]

शुंगकाल में उज्जयिनी की अपेक्षा विदिशा इस क्षेत्र की राजधानी बन गया। भरहुत अभिलेख भी विदिशा का महत्व प्रतिपादित करते हैं।[26]

सातवाहन तथा पश्चिमी क्षत्रप- प्राचीनकाल में पूर्वी मालवा 'आकर' कहलाता था, जिसका केन्द्र विदिशा था। पश्चिमी मालवा, जिसकी राजधानी उज्जयिनी थी, अवन्ति कहलाती थी। लेकिन जब कोई शासक संपूर्ण मालवा पर अधिकार कर लेता था तो इस क्षेत्र का नाम 'आकरावन्ति' प्रमाणों में मिलता है। अवन्ति पर आन्ध्र के शासक शातकर्णी (194-185 ई.पू.) ने पहले ही आधिपत्य स्थापित कर लिया था। ऐसे तथ्य मत्स्य पुराण से ज्ञात होते हैं। रानी नयनिका के नानाघाट तथा हाथी गुंफा शिलालेखों से भी यह सिद्ध होता है। लगभग 720 ई.पू. में सातवाहनों ने पूर्वी मालवा अर्थात आकर

पर विजय प्राप्त कर ली।[28]

सातवाहनों के प्रतिद्वन्द्वी पश्चिमी क्षत्रप थे, जो इन्डोसिथियन थे। जैन कृति 'कलकाचार्य कथानक' और 'मेरुतुंग थेरावलि' से पता चलता है कि जैन मुनि कलकाचार्य उज्जैन के नृशंस शासक गर्दभिल्ल से बदला लेना चाहते थे। शक प्रमुखों ने गर्दभिल्ल की राजधानी उज्जैन पर आक्रमण किया और उसे परास्त कर मालवा के शासक बन बैठे। प्रारंभ में उन्होंने संपूर्ण मालवा पर कब्जा कर लिया। परंतु कुछ ही वर्षों के बाद गर्दभिल्ल के पुत्र 'विक्रमादित्य' ने उन्हें उज्जैन से बाहर खदेड़ दिया। विक्रमादित्य अनेक गाथाओं के हीरो के रूप में विख्यात हैं। विक्रमादित्य से लगभग 135 वर्ष बाद वे अपने खोए हुए राज्य को पुनः विजित कर सके।[30] उनके वंश के 20 शासक प्रथम सदी से लगभग तीन सौ वर्ष इस क्षेत्र पर शासन करते रहे। शक क्षत्रपों ने उज्जैन को अपने विशाल राज्य की राजधानी बनाया और नगर के वैभव को पुनर्स्थापित किया। इस क्षहरात वंश का स्थापक भूमक था। इसके द्वितीय शासक नहपान ने संपूर्ण मालवा जीत लिया था। नासिक तथा कार्ला शिलालेखों में इसका उल्लेख है।[31] नहपान के राज्य में गुजरात, अनूप (निमाड़) आकर तथा अवन्ति सम्मिलित थे। कर्दमक वंश के चष्टन और रुद्रदामन शक्तिशाली शासक हुए। टालमी के अनुसार चष्टन की राजधानी ओजेन (उज्जैन) थी।[32] रुद्रसिंह तृतीय पश्चिमी भारत का अंतिम शासक था। उसने 395 ई.पू. तक शासन किया, फिर चंद्रगुप्त द्वितीय ने उसे परास्त कर अपने राज्य में मिला लिया।

गुप्त वंश- चंद्रगुप्त द्वितीय (विक्रमादित्य) ने, जिसका नाम सांची के बड़े स्तूप की बेदिका के एक लेख में मिलता है, पश्चिमी भारत के क्षत्रपों से इस क्षेत्र को छीन लिया था। इस क्षेत्र के गुप्तों के आधिपत्य में चले जाने की पुष्टि, सांची के निकट उदयगिरि पहाड़ी की गुफाओं में प्राप्त दो पुरालेखों से होती है। चंद्रगुप्त ने शक राजा रुद्धसिंह पर विजय प्राप्त कर, सन 395 ई.पू. में उज्जैन को राजधानी बनाया।[33]

चंद्रगुप्त द्वारा आकरावंति सहित पश्चिमी भारत पर विजय से गुजरात के बंदरगाह गुप्त साम्राज्य के कब्जे में आ गये। परिणामस्वरूप इस क्षेत्र की व्यापारिक गतिविधियों पर उनका पूरा नियंत्रण हो गया। उज्जैन, देश का एक अत्यंत महत्वपूर्ण व्यापार-विनिमय केन्द्र बना रहा। पाँचवी सदी के अंत तक मालवा क्षेत्र गुप्त सम्राटों के अधिकार में रहा। सन् 467-68 ई.पू. के बाद, स्कंदगुप्त की मृत्यु हो जाने पर गुप्त साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया।

वाकाटक- संभवतः स्कंदगुप्त या बुधगुप्त की मृत्यु के बाद बाशिम शाखा के सशक्त शासक हरिषेण ने 500 ई.पू. के आसपास अवन्ति और गुजरात को अपने राज्य में मिला लिया। हरिषेण के अजन्ता अभिलेख में यह दावा किया गया है। 570 ई.पू. में हरिषेण की मृत्यु के उपरांत मालवा पर वाकाटक प्रभुत्व समाप्त हो गया।

यह भी उल्लेख मिलता है कि 500 ई.पू. के बाद मालवा एक स्थानीय सरदार भानुगुप्त के अधिकार में चला गया। इसके कुछ वर्षों बाद हूण राजा तोरमाण ने मालवा को विजित कर लिया था।[34] तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल ने आस-पास के सभी राज्यों को अपने अधीन कर लिया था। इन दो हूण शासकों ने लगभग 22 वर्ष शासन किया।

इस अवधि में मालवा पर अधिकार करने के लिए अनेक शक्तियों में घात-प्रतिघात चलते रहे। चीनी यात्री ह्वेन सांग, जो सातवीं सदी के द्वितीय चतुर्थांश में इस क्षेत्र में आया, ने लिखा है कि उसने शिलादित्य प्रथम धर्मादित्य को मालवा के पश्चिमी भाग पर शासन करते देखा था। 616 ई.पू. के विरदी पट्ट दर्शाते हैं कि खराग्रह प्रथम, बलभी से उज्जयिनी तक के क्षेत्र का शासक था।[35]

गुर्जर-प्रतिहार- विश्वास किया जाता है कि सातवीं सदी के द्वितीय चरण में गुर्जर-प्रतिहार वंश की एक शाखा ने मालवा में राज्य स्थापित किया था जिसकी राजधानी उज्जैन थी। कहते हैं कि 720 ई.पू. में गुर्जर-प्रतिहार की राजधानी जोधपुर थी और उस वर्ष सिलुक नामक राजा गद्दीनशीन हुआ था। संभवतः 725-35 ई.पू. के बीच, सिलुक के शासनकाल में, अरबियों ने पश्चिमी भारत पर आक्रमण शुरू कर दिये थे। आक्रमणकारी मालवा में उज्जैन तक पहुँच गये थे। किन्तु प्रतिहार शासक

नागभट्ट प्रथम ने उन्हें खदेड़ दिया। इस पराक्रम से नागभट्ट तथा प्रतिहार वंश की कीर्ति में श्रीवृद्धि हुई।[36] इसके एक शासक, वत्सराज, का एक शिलालेख में अवन्ति के शासक के रूप में उल्लेख मिलता है।

राष्ट्रकूट- आठवीं सदी के अंत में पश्चिमी क्षेत्र के अधिपति प्रतिहारों, बंगाल के पाल राजाओं और दक्षिण के राष्ट्रकूटों में इस क्षेत्र के स्वामित्व के लिए ऐतिहासिक त्रि-शक्ति संघर्ष प्रारंभ हो गया। वत्सराज ने धर्मपाल का आक्रमण विफल कर दिया। राष्ट्रकूट दन्तिदुर्ग ने 747 ई.पू. में मालवा जीत लिया। उसने प्रतिहार राजा के महल पर कब्जा कर लिया और उज्जैन में हिरण्य-गर्भदान उत्सव किया। गुर्जर प्रतिहार राजा को द्वार-पाल बनना पड़ा। दन्तिदुर्ग पूरे मालवा, विदर्भ तथा महाकोशल का अधिपति बन गया।[38] उसी समय दक्षिण के राष्ट्रकूट राजा ध्रुव (783 से 793 ई.पू.) ने विन्ध्य पर्वत पार किया और वत्सराज को करारी मात दी। प्रतिहार राजा वत्सराज राजस्थान की ओर पलायन कर गया और कभी वापस नहीं आया। पालों तथा प्रतिहारों ने इस क्षेत्र पर कब्जा करने का प्रयास किया परन्तु राष्ट्रकूट गोविन्द तृतीय ने प्रतिहार नागभट्ट द्वितीय को यहाँ से खदेड़ दिया। कहा जाता है कि गोविन्द ने मालवा का प्रशासन अपने मातहत, उपेन्द्र परमार, को सौंप दिया था। मालवा अगले राष्ट्रकूट राजा इन्द्र तृतीय (914-922 ई.पू.) के अधिकार में बना रहा क्योंकि प्रतिहार महिपाल के विरुद्ध अभियान में वह अपने मातहत परमार राजा वाक्मति प्रथम के यहाँ उज्जैन में अनेक दिनों तक ठहरा था।

परमार- गुर्जर-प्रतिहार साम्राज्य के बाद मालवा में परमारों का स्वतंत्र राज्य स्थापित हो गया। विघटन के पूर्व से ही परमार वंश के राजा राष्ट्रकूटों के मातहत मालवा का प्रशासन सम्हाले हुए थे। सीयक द्वितीय मालवा का प्रथम स्वतंत्र शासक था। वैसे उपेन्द्र को ही परमार वंश का संस्थापक माना जाता है। सीयक परमार शूरवीर शासक था। उसने राष्ट्रकूटों को पराजित किया। यही नहीं, उसने राष्ट्रकूटों की राजधानी मन्याखेत को लूट लिया और अपना राज्य दक्षिण में ताप्ती, पूर्व में विदिशा तथा पश्चिम में गुजरात तक विस्तृत कर लिया।[39]

वाक्पति द्वितीय, जो कि मुन्ज के नाम से प्रसिद्ध है, एक प्रतापी तथा योग्य शासक था। उसकी अनेक उपाधियाँ थीं- पृथ्वीवल्लभ, श्री वल्लभ, अमोघवर्ष, उत्पलराज और नरेन्द्र। मुन्ज 972 और 974 ई.पू. के बीच शासक बने। उदयपुर प्रशस्ति के अनुसार उन्होंने लाट, कर्नाटक, चोल और केरल के राजाओं को अपनी तलवार से नत-मस्तक कर दिया। दुर्भाग्य से कर्नाटक के राजा तैलब द्वितीय ने उनकी हत्या कर दी।[40] मुन्ज महान सेनापति, ख्यात कवि तथा कला एवं साहित्य के संरक्षक थे। उनके दरबार की शोभा बढ़ाने वालों में धनंजय, भट्ट, हलायुध, धनिक, अमितगति, नवसाहसांकचरित के रचयिता पद्मगुप्त शामिल थे। वे बड़े निर्माता भी थे। उन्होंने उज्जैन में अनेक मंदिरों और घाटों का, धार तथा माण्डू में मुन्ज जलाशय तथा महेश्वर तथा 'मान्धाता' में मन्दिर बनवाये। मुन्ज की मृत्यु 993 ई.पू. में हुई।

मुन्ज का उत्तराधिकारी, सिन्धुराज, भी बड़ा प्रतापी था। उसने हूणों, बस्तर के नाग राजा आदि को पराजित किया।[41] पद्मगुप्त के नवसाहसांग चरित से ज्ञात होता है कि उज्जैन तथा धार परमार वंश की कुल-राजधानियां थीं। परन्तु सिन्धुराज के बारे में स्पष्ट लिखा है कि 'उज्जैन में निवास करते हुए वे आस-पास के क्षेत्र पर शासन करते हैं।'

भोजदेव- सिन्धुराज के बाद उसका पुत्र भोज उसका उत्तराधिकारी बना। उनका शासनकाल 1010 से 1055 ई.पू. तक रहा। भोजदेव परमार राजवंश के सर्वाधिक प्रसिद्ध तथा बहुमुखी प्रतिभा के धनी शासक थे। प्राचीन भारत के महानतम शासकों में उनकी गणना की जाती है।

भोज का नाम केवल एक वीर सैनिक ही नहीं वरन एक निर्माता, महान लेखक तथा विद्वान के रूप में भारत के घर-घर में प्रसिद्ध हुआ। बांसवाड़ा तथा बेतमा[42] अनुदान पत्रों के साक्ष्य से प्रतीत होता है कि अपने राज्यारोहण के तत्काल बाद, मुन्ज को दिये गये मृत्युदण्ड का बदला लेने के लिए उन्होंने कोकण पर आक्रमण किया। उन्होंने राजा का वध करके कोकण पर अधिकार कर लिया।[43] भोज का लगभग सभी पड़ोसियों कल्चुरियों, चन्देलों, कच्छपघातों, चौहानों,

चालुक्यों तथा राष्ट्रकूटों से संघर्ष होता रहा। 1008 ई.पू. में भोज ने महमूद गजनवी के विरुद्ध शाही आनन्दपाल की सहायता के लिए सेना भेजी थी। इसी प्रकार 1043 ई.पू. में वे हिन्दू राजाओं के संघ में शामिल हुए और उन्होंने हांसी, थानेश्वर, नगरकोट तथा विदेशियों के अधीन अन्य राज्यों को जीत लिया। भोज ने लाहौर के किले की सात माह तक घेराबंदी भी की।[44] इन सब से भोजदेव को विदेशी आक्रमण के विरुद्ध भारतीय स्वाधीनता के रक्षक का श्रेय प्राप्त है।

भोज उच्चकोटि के विद्वान भी थे। वे खगोलशास्त्र व्याकरण, भवन-निर्माण कला, काव्यशास्त्र, व्याकरण, आयुर्विज्ञान आदि विषयों में निष्णांत थे। उन्होंने इन विषयों पर 23 ग्रंथों की रचना की थी। भोज ने अपने राज्य की राजधानी उज्जैन से धार स्थानांतरित कर ली थी।[45] यह उज्जैन अनुदान पत्र से पता चलता है क्योंकि वह धार से जारी किया था। राजधानी धार में संस्कृत के गहन अध्ययन के लिए जो विश्वविद्यालय स्थापित किया था वह 'भोजशाला' के नाम से विख्यात है।[45] यद्यपि कमाल मौला ने उसे एक मस्जिद बना दिया था। भोजशाला में ही भोज ने सरस्वती देवी की सुप्रसिद्ध मूर्ति स्थापित की थी। उन्होंने धार का पुननिर्माण कराने में स्वयं द्वारा रचित ग्रंथों 'समरांगणसूत्रधार' तथा 'युक्तिकल्पतरु' में वर्णित वास्तुशास्त्र की विधियों को अपनाया।[46] उन्होंने भोजपुर बसाया और वहाँ एक विशाल शिव मन्दिर जलाशय का निर्माण कराया, जिसमें कहा जाता है कि 365 जल स्रोतों का जल समाहित होता था। बाँध के अवशेष अब भी विद्यमान हैं। अलबरूनी पहला मुस्लिम लेखक है जिसने उज्जैन का और महाकाल की मूर्ति का उल्लेख किया है।[47] फरिश्ता ने भी वर्णन किया है कि राजा भोज वर्ष में दो बार बड़े भोज आयोजित करते थे, जिसमें संपूर्ण भारत के विख्यात संगीतज्ञ तथा नर्तक एकत्र होते थे।[48]

भोजदेव का भाई या चचेरा भाई उदयादित्त, उनके बाद का एक महत्वपूर्ण परमार शासक था। उनके समय के 1080 तथा 1086 ई. के दो शिलालेख प्राप्त हुए हैं। विदिशा जिले में उदयपुर ग्राम में उसने प्रसिद्ध नीलकण्ठेश्वर मंदिर का निर्माण कराया। उनकी पत्नी शालमली ने भोपाल में एक विशाल मंदिर का निर्माण कराया जो 'सभा मण्डल' कहलाता था। सभामण्डल के स्थान पर ही भोपाल की नवाब कुदसिया बेगम ने जामा मस्जिद का निर्माण कराया।[49]

परमारों का पराभव- परमारों का शासन चौदहवीं सदी ई. के प्रारंभ तक अक्षुण्य बना रहा। देवपाल (1218-1239 ई.पू.) के समय दिल्ली के सुल्तान इत्तुतमिश ने मालवा पर आक्रमण किया। 1233 ई.पू. में उसने विदिशा पर कब्जा कर लिया और उज्जैन को तहस-नहस कर दिया। वह उज्जैन से विक्रमादित्य की प्रतिमा और महाकाल प्रस्तर शिवलिंग भी अपनी राजधानी दिल्ली ले गया।[50] उसने उज्जैन के मन्दिर, जिनमें महाकाल का देवस्थल शामिल था, ध्वस्त कर दिये। जैतुगी परमार के शासनकाल में सुल्तान बलबन ने इस क्षेत्र पर आक्रमण किया था।[51]

सल्तनत तथा मुगलकाल- परमार वंश का अंतिम राजा महलक देव था। 1305 ई.पू. में अलाउद्दीन खिलजी ने सेनापति ऐन-उल-मुल्क को बड़ी सेना के साथ मालवा जीतने को भेजा। माण्डू के किले में महलक देव की हत्या कर दी गयी। फिर उज्जैन, माण्डू, चन्देरी आदि सहित मालवा अलाउद्दीन खिलजी के कब्जे में आ गया। एन-उल-मुल्क मालवा का सूबेदार नियुक्त हुआ। यह क्षेत्र धार और उज्जैन का सूबा कहलाया। तब से अठारवीं सदी के मध्य तक, लगभग पाँच सौ वर्षों तक, उज्जैन सहित मालवा पहले दिल्ली के सुल्तानों और फिर मुगलों का सूबा बना रहा।[52]

महापथों का केन्द्र-उज्जैन- प्रमुख धार्मिक नगर के रूप में उज्जैन की प्रतिष्ठा सर्वविदित है। लेकिन इसकी प्रतीति कम है कि सम्पूर्ण प्राचीन काल में, बुद्ध और महावीर के समय से यानी कि पाँचवी शताब्दी ई.पू. से परमार काल तक यथा चौदहवीं सदी के पहले दशक तक, उज्जैन महापंथों और व्यापारिक मार्गों का केन्द्र बिन्दु था। पूर्व से पश्चिम तक तथा उत्तर से दक्षिण तक जाने वाले महापंथ उज्जैन होकर ही निकलते थे। पूर्व दिशा से महापंथ श्रावस्ती, पाटलिपुत्र, कौशाम्बी, भरहुत (सतना जिला), एरण (सागर), विदिशा, गोनद्ध होता हुआ उज्जयिनी पहुँचता था।[53] उज्जयिनी और विदिशा के बीच

गोनद्ध महाभाष्यकार पतंजलि का जन्म स्थान था।[54] गोनद्ध की पहचान सीहोर जिले के दोराहा से हुई है। दोराहा नाम इसलिए पड़ा क्योंकि दो रास्ते, एक उज्जयिनी तथा दूसरा दक्षिण से आकर यहाँ मिलते थे।[55]

उज्जैन से यह मार्ग माहिष्मति होता हुआ गोदावरी के तट पर स्थित प्रतिष्ठान (पैठन) होकर सुदूर दक्षिण की ओर जाता था। इसका नाम दक्षिणापंथ था। एक और मार्ग पश्चिम दिशा की ओर समुद्र तट पर, भृगुकच्छ (भड़ौंच) तक पहुँचता था। इन प्राचीन महापंथों की जानकारी सर्वप्रथम बौद्ध तथा जैन साहित्य में मिलती है। सूत्र निपात में पूर्व से पश्चिम के महापंथ का उल्लेख है। चारों दिशाओं के महापंथों का केन्द्र बिंदु उज्जैन, व्यापारियों और यात्रियों का विश्राम स्थल था।[56]

अपनी केन्द्रीय स्थिति के कारण उज्जैन व्यापार का सर्वाधिक महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया था। देश की विभिन्न दिशाओं से छपा हुआ तथा साधारण कपड़ा, मलमल, आभूषण, मुक्तामणि, हाथी दाँत की वस्तुयें, सौन्दर्य प्रसाधन यहाँ उपलब्ध रहता था। यह सामग्री उज्जैन से देश के अलग-अलग क्षेत्रों तक पहुँचती। साथ ही भृगुकच्छ बंदरगाह से यूरोप और अफ्रीकी देशों व अरब देशों को वस्तुएं निर्यात की जाती। इसी प्रकार विदेशों से आयात वस्तुएं भृगुकच्छ से पहले उज्जैन की मण्डी में एकत्र होतीं। फिर देश के अन्य स्थानों पर पहुँचतीं। पेरीप्लस ने उज्जैन से वस्तुएं का निर्यात किये जाने की चर्चा की है। विदेशों से आयात सामग्री में अस्त्र-शस्त्र, घोड़े, कीमती मदिराएं शामिल थीं।

भारी मात्रा में सोना-चाँदी उज्जैन से आता था। इसी कारण पवित्र शिप्रा नदी पर अवस्थित यह नगर, समृद्धि और सम्पन्नता के शिखर पर था। विशाल और आकर्षक अट्टालिकाओं, उद्यानों, वावड़ियों, घाटों तथा जलाशयों से सुशोभित यह नगरी अद्वितीय थी।[57] महाकवि कालिदास के अनुसार, "यह नगर स्वर्ग से पतित हुआ उसका एक दैदीप्यमान खण्ड दिखाई देता था। क्योंकि इस धनधान्यपूर्ण नगर के बाजार मुक्ताओं, शंखों एवं शुक्तियों के अम्बार से परिपूर्ण थे।"[58] जैन कवि हरिषेण ने लिखा- 'यह दीर्घ मन्दिरों, उत्तम प्रासादों एवं विशाल राजमार्गों से युक्त एक सुरम्य नगर था।'[58]

संदर्भ-

1. स्कंद पुराण, अध्याय 43
2. बी.सी.लॉ, उज्जैनी इन एन्शेण्ट इण्डिया, 1944, पृ. 1
3. मेघदूत, सर्ग एक, पृ. 30
4. कथा सरित सागर, सर्ग 2, पृ. 275
5. मलालशेखर, डिक्शनरी ऑफ पाली प्रापर नेम्स, भाग एक, पृ. 344
6. राधा कुमुद मुखर्जी, अशोक, पृ. 123
7. मेक्क्रिन्डल, एन्शेण्ट इण्डिया एज डिस्क्राइब्ड बाय टॉलेमी, पृ. 154
8. राजेन्द्र वर्मा, शम्भु दयाल गुरु, उज्जैन डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ. 15-16
9. दि विक्रम, जर्नल ऑफ विक्रम यूनीवर्सिटी, 1967, कायथा एक्सकेवेशन; इंडियन आर्कियालॉजी, ए रिव्यू, 1964-65, पृ. 18-19
10. उज्जैन डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ. 16-17
11. वही, पृ. 17
12. इण्डियन आर्कियालॉली-ए रिव्यू, 1955-56, पृ. 1
13. वही, 1956-57, पृ. 20-24; 1957-58, पृ. 34-36
14. मत्स्य पुराण, पृ. 43
15. लिंग पुराण, अध्याय 68
16. बी.सी.लॉ, उपरोक्त, पृ. 11
17. श्याम सुंदर निगम, मालवा के इतिहास संस्कृति के कतिपय पहलू, पृ. 11
18. द एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, पृ. 14
19. वही, पृ. 10

20. पार्जीटर, द पुराण टेक्स्ट, पृ. 18, 68
21. डी.आर.पाटिल, द कल्चरल हेरिटेज ऑफ मध्य भारत, पृ. 14
22. के.ए.नीलकण्ठ शास्त्री, द एज ऑफ द नंदाज एण्ड मौर्याज, पृ. 18
23. दीपवंश, पृ. 42
24. राधा कुमुद मुखर्जी, अशोक, पृ. 123-24
25. मालविकानिमित्र, अंक 5, श्लोक- 20
26. बरुआ और सिन्हा, भरहुत इंस्किपशन्स, पृ. 3
27. वी.सी.लॉ, पृ. 19
28. जॉन मार्शल, मानूमेन्ट्स ऑफ सांची, पृ. 4-5
29. द एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, पृ. 155
30. राजबलि पाण्डे, विक्रमादित्य ऑफ उज्जैन, पृ. 49-50
31. जर्नल ऑफ द न्यूमिसमेटिक सोसायटी ऑफ इण्डिया, जिल्द 22, भाग एक, पृ. 9; जिल्द 14, पृ. 3
32. एपीग्राफिया इण्डिका, जिल्द 7, भाग एक, पृ. 44
33. ट्रांजेक्शन्स ऑफ द रायल एशियाटिक सोसायटी, जि. 1, पृ. 211
34. मजूमदार व अल्टोकर, द बाकाटक गुप्ता ऐज, पृ. 196
35. एस. चट्टोपाध्याय, अर्ली हिस्ट्री ऑफ नार्दन इण्डिया, पृ.- 214
36. उज्जैन डिस्ट्रिक्ट गजेटियर, पृ. 34
37. एपीग्राफिया इण्डिका, जिल्द 8, पृ. 2
38. आर्कियालाजिकल सर्वे ऑफ वेस्टर्न इण्डिया, जिल्द 5, पृ. 87; द एज ऑफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ. 2
39. द एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ. 94-95
40. प्रतिपाल भाटिया, द परमाराज, पृ. 55
41. डी.सी.गांगुली, हिस्ट्री ऑफ द परमार डायनेस्टी, पृ. 66-67
42. एपीग्राफिया इण्डिका, जिल्द 9, पृ. 181-183 तथा जिल्द 18, पृ. 320-25
43. वही, पृ. 97
44. स्ट्रगल फार एम्पायर, पृ. 66-67; एपीग्राफिया इण्डिका, जिल्द 3, पृ. 46
45. के.बी.डोंगरे, इन टच विथ उज्जैन, पृ. 32-33; उज्जयिनी दर्शन, 1957, पृ. 58
46. भाटिया, पृ. 95
47. अलबरूनीज इण्डिया, संपा. सचाऊ, जिल्द एक, पृ. 202; इलियट और डासन, हिस्ट्री ऑफ इण्डिया एज टोल्ड वाय इट्स ओर हिस्टारियन्स, जि. एक, पृ. 59
48. तारीखे फरिश्ता, ब्रिग्ज द्वारा अनूदित, जि. एक, पृ. 76
49. भोपाल स्टेट गजेटियर, 1908, पृ. 95-96
50. तबकात-ए-नासिरी, अनु. रेवर्टी, जि. एक, पृ. 821-623
51. द स्ट्रगल फार एम्पायर, पृ. 70
52. के.एस.लाल, हिस्ट्री ऑफ द खिलजीज़, पृ. 114-168; फरिश्ता, उपरोक्त, जि. एक, पृ. 361, यू.एन.डे, मिडीवल मालवा, पृ. 6
53. रिस डेविड, बुद्धिस्ट इण्डिया, पृ. 103
54. हरिहर निवास द्विवेदी व वि.गो. द्विवेदी, मध्यभारत का इतिहास, पृ. 27
55. पी.एन.श्रीवास्तव व शम्भु दयाल गुरु, सीहोर एवं भोपाल जिला गजेटियर, पृ. 258
56. के.सी.जैन, मालवा थ्रू द एजेज, पृ. 147
57. श्याम सुन्दर निगम, पूर्वोक्त, पृ. 16
58. कालिदास, पूर्व मेघ, 34